भोजपुरी लोक गीतों का साहित्यिक विश्लेषण

(रिसर्च एण्ड डेवल्पमेंट योजनान्तर्गत उच्चशिक्षा
उ0प्र0 सरकार द्वारा अनुदानित शोध के अन्तर्गत)

16

डॉ. ज्योति शर्मा
प्रोफेसर
साहू रामस्वरूप महिला महाविद्यालय, बरेली
ईमेलः jyoti.sharma2317@gmail.com

सारांश

कला साहित्य का वाह्य सौन्दर्य है, रस उसकी आत्मा है। कला का महत्व काव्य को सुन्दरता प्रदान करने में है न कि उसे जटिलता के आवरण में बद्ध करने में। भोजीपुरी भाषा का महत्व लोकबोली के रूप में जितना अधिक है उससे कहीं अधिक साहित्यिक भाषा के रूप में है। भोजपुरी गीतों में उनमुक्त और स्वच्छन्द अभिव्यक्ति है। गीतों में संगीतात्मकता है। इसमें नदी की गतिशीलता और प्रवाह है। गीतों में काव्यशास्त्र के छन्दों का नहीं अपितु उनमुक्त छन्दों का प्रवाह है। उनमें लय है और उस लय की प्रचुरता के कारण ही गीत मानव के मन को आनन्द विभोर कर देते हैं। संगीत और काव्य दोनों को श्रव्य कलाओं के अंतर्गत रखा गया है। उनका मूलभूत आधार वाणी, ध्वनि अथवा शब्द तत्व हैं। संगीत एवं काव्य दोनों का मूल प्रायोजन सर्वथा भिन्न है, साहित्य का प्रायोजन मात्र अर्थ सम्प्रेषण है तो लोक संगीत का प्रायोजन आत्मानुरन्जन। दोनो के प्रायोजनों में भिन्नता होने पर भी दोनों ही प्रभावोत्पादक रहे हैं। यदि भोजपुरी लोकगीतों में स्वरों की प्रधानता नहीं होती तो वे केवल अपने काव्य गुणों के कारण इतने दीर्घ जीवित नहीं होते।

मुख्य शब्द

लोकगीत, भाव, रस, अलंकार

प्रस्तावना

किसी भी समाज तथा राष्ट्र दपर्ण उसका लोक साहित्य होता है। लोक साहित्य में संकलित मूल भाव उसकी अनमोल विभूति है। यह लोक मानस का प्रतिबिम्ब ही नहीं बल्कि लोक परम्परा और ऊँची विरासत का प्रतीक है। पौराणिक धरोहर से लेकर संस्कार, पुरातन मूल्य, रीति–रिवाज, उल्लास, महोत्सव, लोक कला आदि इसमें दृष्टि गोचर होते हैं। हमारे जीवन की वास्तविक सांस्कृतिक धरोहर वाचिक एवं आडंबर रहित साहित्य से उद्वासित होती है, जिसे लोक साहित्य कहते हैं। लोक साहित्य में ''लोकगीतों का प्रमुख स्थान है लोकगीतों में जनजीवन के हर्ष और विषाद, आशा और निराशा, सुख और दुख सभी की अभिव्यक्ति होती है। प्रकृति संगीतमय है। लोकगीत प्रकृति के उसी महासंगीत के अंश है''[2] जो अनवरनत अपने संस्कार, परंपरा, संस्कषति को अपनी पीढ़ी से अगली पीढ़ी तक स्वभाविक रूप से आगे बढ़ती रहती है। यह एक जनमानस के अंतर्मन की अवाज है जो आम व्यक्ति के द्वारा आम व्यक्ति के आवाज के रूप में आम व्यक्ति हेतु होती है। साहित्य के शास्त्रीय नियमों, छंद, अलंकार एवं व्याकरण के बन्धन से मुक्त होती है। लोक संगीत पीछे समाज का भावात्मक संबंध होता है। उस पर किसी प्रकार का आघात सीधे समाज पर आघात होता है। लोक संगीत का शास्त्र अलिखित होते हुए भी उतना ही अनुभव संगत और वैज्ञानिक है, जो परम्परा से हमें प्राप्त हुआ है''। संत कबीर द्वारा इस भाषा को अपनाने से इसका महत्व बहुत बढ़ गया''[3]।

भोजपुरी लोकगीत– भाषा, भाव, रस

हिन्दी में भोजपुरी भाषा का महत्वपूर्ण स्थान है। ''भोजपुरी भाषा केवल बिहार एवं उत्तर प्रदेश के 18 जिलों में ही नहीं बोली जाती, बल्कि असम, बंगाल, महाराष्ट्र (बम्बई एवं पुणे), मध्यप्रदेश (सुरगुजा, जसपुर और बस्तर) आदि राज्यों में इसे बोलने की संख्या कम नहीं है। इसके अतिरिक्त भाषा मारीशस, फिजी, सूरीनाम, टीनीडाड आदि विदेशों में भी मातृभाषा के रूप में व्यवहृत होती है''[4]। भोजपुरी लोकगीतो की जनजीवन में अधिक व्यापकता और प्रचुरता है। जीवन का कोई भी भाव पक्ष इन गीतों से विलग नहीं है। कोमल–कठोर, स्थूल, सूक्ष्म लौकिक–परालौकिक सभी भावों के गीतों की माला में बहुत सुन्दरता से पिरोया गया है''। संत कबीरदास, सूरदास एवं गोस्वामी तुलसीदास से लेकर अनेक रचनाकारों पर भोजपुरी साहित्य का असीम प्रभाव रहा है''[5]।

बिहार के प्राचीन जिला भोजपुर के आधार पर भोजपुरी शब्द का निर्माण हुआ। इसका नामकरण भोजपुर के राजा ''राजा भोज'' के द्वारा किया गया था। यह मुख्य रूप से बिहार, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, पश्चिमी झारखंड, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ के उत्तर पूर्वी भाग में तथा नेपाल के तराई के क्षेत्र में बोली जाती है। विश्व के सभी महाद्वीपों पर भोजपुरी भाषा को जानने एवं समझने वाले लोग बिहार व पश्चिमी उ0प्र0 में मिल जायेंगे। ब्रिटिश राज्य के काल में असंख्य मजदूर जीविका की तलाश में विश्व के कई देशों में जाकर बस गये। इनमें मारीशस, सूरिनाम, गुयाना, फिजी, त्रिनिदाद और टोबेगो आदि प्रमुख हैं।

भाषा को कोमल, मधुर, तथा अलंकारिक रूप प्रदान करने के लिए भोजपुरी भाषा में कठोर, कर्कश, एवं संयुक्ताक्षरों का प्रयोग न के बराबर होता है। भोजपुरी गीतों एवं लोक साहित्य का क्षेत्र काफी व्यापक है। हमारे धार्मिक जीवन में संस्कार अपना एक विशिष्ट स्थान रखते है जन्म से लेकर मरण तक, हमारा जीवन संस्कारों से गुथा है। इन सभी संस्कारों में भोजपुरी गीतों की बहुतायता है।

भाव– भोजपुरी लोकगीतों में व्यंजित भाव लोकजीवन के सहज स्तर पर प्रतिष्ठित ही नहीं है। बल्कि उसके व्यथार्थ जीवन में निरन्तर सम्बद्व भी रहते हैं। इसका कारण है कि लोकगीतों की भावभिव्यक्ति की समुचित अनुभूति लोकगीतों के वास्तविक वातावरण और संवेदन के प्रसंग में ही ग्रहण की जा सकती है। इसमें जीवन का गहरा संदर्भ स्वीकृत है, जिसके बिना अभिव्यक्ति भाव की सघनता को मापा ही नहीं जा सकता। लोकगीतों की भावना जीवन को वास्तविक एवं विशिष्ट स्थितियों से सम्बद्व होकर व्यंजित होती है, अतः उसकी अभिव्यक्ति तथा अनुभावन एक साथ होता है। लोक जीवन और उसकी भावनाओं का केन्द्र परिवार है। उसी केन्द्र पर सारा लोक संचालित होता रहता है। इन तत्वों से लोकगीतों की मुक्त तथा स्वच्छन्द भावना में अभिव्यक्ति करने का अवसर मिला है। इस परिवार के अंतर्गत भावों के अनेक सम्बन्धात्मक आधार हैं और इनके पारस्परिक प्रेम, ईर्ष्या, प्रतिद्वन्दिता से लोकगीत परिव्याप्त रहते हैं। पारिवारिक आत्मीयता, स्नेह, ममता, उदारता तथा उत्सर्ग आदि भावनाओं के साथ ईर्ष्या, देष, प्रतिद्वन्दिता आदि भाव मिले जुले हैं। भोजपुरी लोकगीतों में भावात्मक संवेदन का यह ताना–बाना मुख्यतः माँ–पुत्री, सास–बहू, भाई–बहिन, पति–पत्नी, देवर–भाभी, ननद–भौजाई तथा पिता–पुत्री के सम्बन्धों पर बुना जाता है। इन मुख्य सम्बन्धों के अतिरिक्त दादा–दादी, ताऊ–ताई, फूफा–बुआ आदि अनेक ऐसे सम्बन्ध भी हैं जो अवसर एवं प्रसंग के अनुसार अपने भावात्मक आधार प्रस्तुत करते हैं। भाई–बहन के नैसर्गिक प्रेम का व्यापक विस्तार लोकगीतों में मिलता है''। बहन की विदाई के बाद भाई पालकी दरवाजे पर रोक लेता है जिससे वह ससुराल न जाए।

फनावेले कवन राम डडियाँ, बहू चढि चलुरे हमार
अकेले कवन भईया डडियाँ, वहिना जाये न देउ''[6]।

भाई के जन्म के अवसर पर बहिन उल्लासित होकर भाई के लिए मंगल कामना करती है। बहिन का यही प्रेम अधिकार के रूप में भतीजे के जन्म के अवसर पर व्यक्त होता है।

लोकगीातों में ननद–भौजाई और देवर–भाभी के सम्बन्ध को लेकर काफी व्यापक एवं सूक्ष्म भावनाओं की अभिव्यक्ति हुई है। लोक में इन पारिवारिक सम्बन्धों के अतिरिक्त सास–बहू का सम्बन्ध एक महत्वपूर्ण कड़ी है जो लोकगीतों में सास अपने नियंत्रण कठोरता एवं बहू अपनी पीड़ा एवं असहाय होने की भावना को लेकर जीती है।

रस– रसानुभूति की दृष्टि से इन गीतों का अवलोकन करें तो साहित्य के नव रसों में से पांच रसों का महत्व इन लोक गीतों में दृष्टि गोचर होता है और इन पांच रसों में से करूण रस की विशेष व्यापकता दिखाई पडती है। लोकगीतों में जो पाँच रस स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ते हैं–

1. श्रंगार रस 2. करूण रस
3. वीर रस 4. हास्य रस
5. शान्त रस

श्रंगार रस– श्रंगार रस के अंतर्गत विवाह गीत, सोहर गीत, जनेऊ गीत, झूमर, पूरबी गीत गाए जाते हैं इसमें संयोग तथा विप्रलम्भ दोनों प्रकार के श्रंगार मिलते हैं।

करूण रस– विवाह के विदा के गीतों में तथा गवना, जंत, शेपनी एवं सोहनी आदि गीतों में करूण रस की प्रधानता रहती है, विदा के गीत तो करूणा से ओतप्रोत तो रहते ही हैं और जंतसार के गीतों में भी हृदय विदारक चित्रण स्त्री के दुःखदाई जीवन का रहता है। ''पूरबी'' गीतों में भी करूण रस विशेष रूप से मिलता है। पति के वियोग के कारण, स्त्री की दुर्दशा, वियोग एवं वैधव्य के गीत होते हैं। ''धरनीदास जी नें भोजपुरी में 'शब्द प्रकाश' की रचना की है उनकी हिन्दी में भी भोजपुरी की प्रबल छाप वैसे ही है जैसे कि तुलसीदास जी की रामायण में अवधी की है। शब्द प्रकाश में करूण रस के गीत दिये गए हैं''[7]।

वीर रस– ''भोजपुरी में वीर रस कविता की बाहुलता है। काव्य आल्हा लारिक, कुँवर सिंह वीर रस के काव्य है''[8]। भोजपुरी गीतों में कुछ गीत प्रबन्धात्मक गीत भी हैं जिसमें कोई लम्बी कथा होती है। कथा के साथ–साथ गेयता भी रहती है इन गीतों में वीर रस की प्रधानता रहती है। 'आल्हा' वीर रस का महाकाव्य है, इसके अतिरिक्त बाबू कुंवर सिंह के गीत विजयमल, बनजारा आदि के गीतों में भी वीर रस दर्शित होता है। छन्द की दृष्टि से यदि आला देखे तो ज्ञात होता है कि आल्हा जिस छन्द में लिखा गया है उसमें कूट–कूट कर जोश भरा है।

हास्य रस– भिखारी ठाकुर के हास्य विनोद के गीतों का भोजपुरी जनता में बहुत प्रचार है'' मोतीहारी के श्याम बिहारी तिवारी हास्य रस के वर्तमान सर्वश्रेष्ठ कवि थे''[9]। विवाह के गीतों में 'कोहबर' के गीतों तथा 'ज्योनार' के 'गारी' के गीतों में हास्य रस की प्रधानता रहती है। विवाह के पश्चात् एक कमरे में दूल्हा–दुल्हन के बैठाकर अनेकों हास्य–परिहास के व्यंग तथा गीत गाये जाते हैं, उन्हें कहोबर के गीत कहते हैं।

शान्त रस– भक्ति रस के गीत जैसे निरगुन, तुलसी, गंगा आदि के गीत तथा परिक्रमा और व्रत के गीतों में शान्त रस दृष्टिगत होता है।

अलंकार– भोजपुरी लोकगीतों में यदि अलंकार की दृष्टि से देंखे तो इनमें अलंकारों का प्रायः अभाव ही है। उपमा अलंकार इसमें सबसे अधिक दिखलाई पड़ता है। इसके अतिरिक्त रूपक एवं श्लेष अलंकार भी कहीं–कहीं दिखाई पड़ता है। उपमा अलंकार का स्पष्ट उदाहरण है–

हुरबा नियर तोर जुखा ए गोरिया,
पुअवा नियर तोर गाल,
पनवा नियर तू त पातर बाडू गोरिया
लौटवा नियर तोर भाल
(हुरबा लाठी के नीचे का भाग)

श्लेष अलंकार– लोक गीतों में कहीं–कहीं श्लेष अलंकार भी मिलता है जैसे–

रसवा के भेजली भवरवा के संगिया
रसवा ले अइले हो थौर
अतना ही रसवा में केकरा के बढबो,
सगरी नगरी हित मोर

इस गीत में भंवरा, भ्रमर और पति और रस मधु और प्रेम शब्द में श्लेष है। सुन्दरी का आशय यह है कि उसके पास प्रेम इतना कम है कि वह एक पुरूष पति के अतिरिक्त अन्य किसी से प्रेम नहीं कर सकती। भंवरता में 'वा' का प्रत्यय प्रेम का सूचक है।

रूपक अलंकार– रूपक अलंकार भी कहीं–कहीं मिलता है जैसे–

अइले बहुरिया देवी मोर अइली, धरबा मइल है अंजोर रे।
चन्दा मुखड़ा लगावे टिकुलिया, मंगवा में भरले सिन्दूर रे।।
यहाँ बहुरिया को देवी रूप दे दिया और मुख को चाँद का।

अनुप्रास अलंकार– लोगगीतों में कहीं–कहीं अनुप्रास की छठा देखने को मिलती है।

''झोप झोपारी के फरेला सोपारी
नरिअरवा के बारी, आहो लाला''

यहां झ वर्ण दो बार, प की तीन बार, तथा र की पांच बार आवृत्ति हुई।

निष्कर्ष

भोजपुरी गीतों में भावों का विशाल भण्डार है। रस एवं अलंकार की दृष्टि से भी यह खरे उतरते हैं। भोजपुरी गीतों में हमारी निष्ठा और विश्वास, संस्कार, पुरातन मूल्य, रीति रिवाज संरक्षित है और इसके माध्यम से समाज एवं संस्कृति की वास्तविक स्थिति तथा उसकी भूमिका को ठीक से समझा जा सकता है। भोजपुरी लोकगीतो में नारी मन की विभिन्न अवस्थाओं, कोमल भावनाओं, व्यथा का मार्मिक, संवेदनात्मक चित्रण मिलता है।

भोजपुरी लोकगीतों के धुनों के आधार पर यह स्पष्ट हो जाता है कि भारतीय शास्त्रीय संगीत की राग परम्परा के जन्मदाता लोकधुनों में समाहित लोकधुनें ही हैं। लोकगीतों में हमारी परम्परागत भावनायें अचार–विचार, स्वभाव आदि तो दिये हुए हैं ही, परन्तु उनमें संगीत तत्व भी अपना विशेष महत्व रखता है। भोजपुरी लोकगीतों का क्रमिक विकास रहा है और उसका अपना एक इतिहास भी है। इनमें सुन्दर साहित्यिक शब्दों के भावों के स्रोत के साथ संगीत के स्रोत भी अविरल गति से प्रवाहित हैं।

संदर्भः–

1. डा0 विश्वकर्मा राधाकष्ष्ण, भोजपुरी लोकगीत, विकास प्रकाशन कानपुर पृ0 सं0–8
2. डा0 त्रिपाठी रामनरेश, कविता कौमुदी भाग–5 हिन्दी मन्दिर प्रयाग पृ0 सं0–79
3. डा0 उपाध्याय रवि शंकर, भोजपुरी लोकगीतों का सांस्कृतिक अध्ययन, भारतीय लोक संस्कृति शोध संस्थान वाराणसी पृ0 सं0–17
4. डा0 उपाध्याय रविशंकर, भोजपुरी लोकगीतों का सांस्कृतिक अध्ययन, भारतीय लोक संस्कृति शोध संस्थान वाराणसी, पृ0 सं0–19
5. डा0 सिंह संजय कुमार, भोजपुरी लोक संस्कृतिक एवं हिन्दूस्तानी संगीत कनिष्क पब्लीशर दिल्ली पृ0 सं0–105
6. उपाध्याय कृष्णदेव , भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन हिन्दी साहित्य पुस्तकालय वाराणसी– पृ0 सं0–183
7. सिंह दुर्गा शंकर प्रसाद, भोजपुरी लोकगीत में करूण रस हिन्दी साहित्य सम्मेलन पृ0 सं0–88
8. सिंह दुर्गा शंकर प्रसाद, भोजपुरी लोकगीतों में करूण रस हिन्दी साहित्य सम्मेलन पृ0 सं0–40
9. सिंह दुर्गा शंकर प्रसाद, भोजपुरी लोकगीतों में करूण रस हिन्दी साहित्य सम्मेलन पृ0 सं0–46–47
10. उपाध्याय रविशंकर, लोकगीतों का सांस्कृतिक अध्ययन भारतीय लोक संस्कृति शोध संस्थान वाराणसी पृ0 सं0–284